जन्म शताब्दी पुस्तकमाला- २२

क्षुद्रता छोड़ें महानता के पथ पर चलें

(प्रवचन)

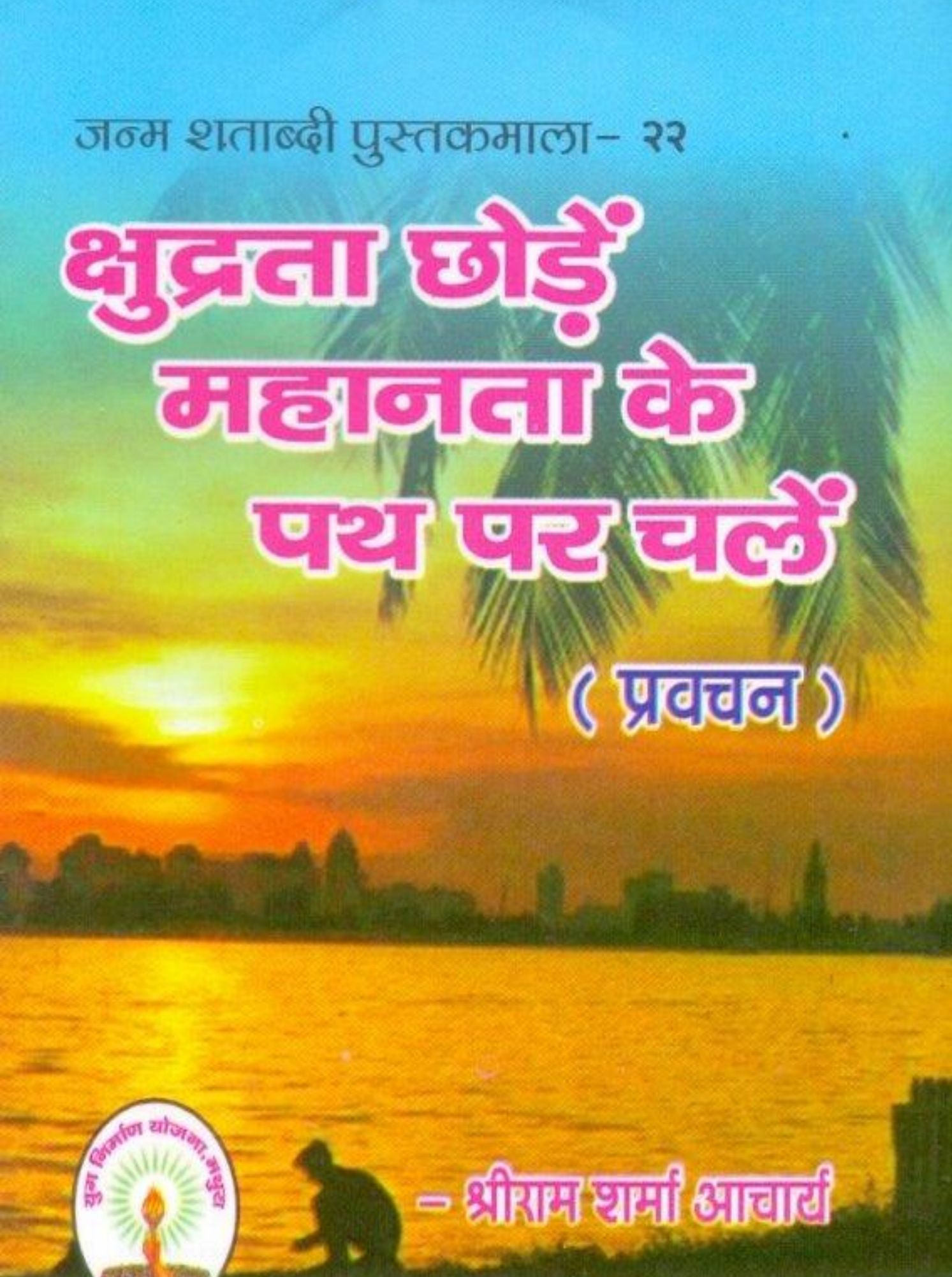

- श्रीराम शर्मा आचार्य

क्षुद्रता छोड़ें, महानता के पथ पर चलें

गायत्री मंत्र हमारे साथ-साथ बोलें—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

मित्रो, हममें से प्रत्येक परिजन को कुछ मान्यताएँ अपने मन में गहराई तक उतार लेनी चाहिए। एक यह कि जिस समय में हम और आप जीवित रह रहे हैं, वह एक विशेष समय है। यह युग परिवर्तन की वेला है, इसमें युग बदल रहा है। जिस तरह प्रातःकाल का समय विशेष़ महत्त्वपूर्ण समय होता है। इसमें हर आदमी सामान्य काम न करके विशेष काम करता है। अध्ययन से लेकर भजन तक के उच्चस्तरीय कार्य इसमें किए जाते हैं, क्योंकि प्रातःकालीन समय अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है। यह समय भी इसी तरह का है। यह संध्याकाल है, इसमें युग बदल रहा है। इस विशेष संध्याकाल

को हमें विशेष कर्त्तव्यों के लिए सुरक्षित रखना चाहिए। हममें से प्रत्येक साधक को यह मानकर चलना चाहिए कि हमारा व्यक्तित्व विशेष है। हमको भगवान ने किसी विशेष काम के लिए भेजा है। कीड़े-मकोड़े और दूसरे सामान्य तरह के प्राणी पेट भरने के लिए और औलाद पैदा करने के लिए पैदा होते हैं। मनुष्यों में से भी बहुत नर-पामर और नर-कीटक हैं जिनके जीवन का कोई लेखा-जोखा नहीं। पेट भरने और औलाद पैदा करने के अलावा दूसरा कोई काम वे न कर सकें। लेकिन कुछ विशेष व्यक्तियों के ऊपर भगवान विश्वास करते हैं और यह मानकर भेजते हैं कि यह हमारे भी कुछ काम आ सकते हैं, केवल अपने ही गोरखधंधे में नहीं फँसे रहेंगे। युग निर्माण परिवार के हर व्यक्ति को अपने बारे में ऐसी ही मान्यता बनानी चाहिए कि हमको भगवान ने विशेष काम के लिए भेजा है। यह कोई विशेष समय है और हममें से हर आदमी को यह अनुभव करना चाहिए कि हम कोई विशेष उत्तरदायित्व लेकर के

आए हैं। समय को बदलने का उत्तरदायित्व, युग की आवश्यकताओं को पूरा करने का उत्तरदायित्व हमारे कंधों पर है। अगर इन तीन बातों पर आप विश्वास कर सकें तो आपकी प्रगति का दौर खुल सकता है और आप महामानवों के रास्ते पर, जो कि अपने इस युग निर्माण परिवार का उद्देश्य है, आप सफलता-पूर्वक चल सकते हैं।

यह विशेष समय वैसा नहीं है जैसा कि शांति के समय का होता है। यह आपत्तिकाल जैसा समय है और आपत्तिकाल में आपातकालीन उत्तरदायित्व होते हैं। हमारे ऊपर सामान्य जिम्मेदारियाँ नहीं हैं, वरन युग की भी जिम्मेदारियाँ हैं, यह मानकर हमको चलना चाहिए और साथ ही यह भी मानकर चलना चाहिए कि रीछ-वानर जिस तरीके से विशेष भूमिका निभाने के लिए आए थे। जैसे पांडव विशेष भूमिका निभाने के लिए आए थे और ग्वाल-बाल श्रीकृष्ण भगवान के साथ विशेष भूमिका निभाने के लिए आए थे। गांधी जी के सत्याग्रही उनके साथ विशेष

भूमिका निभाने के लिए आए थे। बुद्ध के साथ चीवरधारी भिक्षु कुछ विशेष उत्तरदायित्व निभाने के लिए आए थे। आप लोग इस तरह का अनुभव और विश्वास कर सकें कि आप लोग हमारे साथ उसी तरीके से जुड़े हुए हैं और विशेष उत्तरदायित्व महाकाल का सौंपा हुआ पूरा करने के लिए हम लोग आए हैं। अगर यह बात मान सकें तो फिर आपके सामने नए प्रश्न उत्पन्न होंगे और नई समस्याएँ उत्पन्न होंगी और नए आधार, नए कारण उत्पन्न होंगे।

इसके लिए आपको जो पहला कदम बढ़ाना पड़ेगा, वह यह कि आपको अपनी परिस्थितियों में हेर-फेर करना पड़ेगा। जिस तरीके से सामान्य मनुष्य जीते हैं, उस तरीके से आप जीने से इनकार कर दें और यह कहें कि हम तो विशेष व्यक्तियों और महामानवों के तरीके से जिएँगे। जब मात्र पेट ही भरना है तो गंदे तरीके से क्यों? श्रेष्ठ तरीके से क्यों न भरें? पेट भरने के अलावा जो कार्य कर सकते हैं, उसे क्यों न करें? जब यह प्रश्न आपके

सामने ज्वलंत रूप से आ खड़ा होगा, तब यह आवश्यकता आपको अनुभव होगी कि हम अपनी मन:स्थिति में हेर-फेर कर डालें, अपनी मन:स्थिति को बदल डालें और हम लौकिक आकर्षणों की अपेक्षा यह देखें कि इनमें भटकते रहने की अपेक्षा, मृगतृष्णा में भटकते रहने की अपेक्षा भगवान का पल्ला पकड़ लेना ज्यादा लाभदायक है। भगवान का सहयोगी बन जाना ज्यादा लाभदायक है। संसार का इतिहास बताता है कि भगवान का पल्ला पकड़ने वाले, भगवान को अपना सहयोगी बनाने वाले, कभी घाटे में नहीं रहे। अगर इस बात पर विश्वास कर सकें तो जानना चाहिए कि हमने एक बहुत बड़ा प्रकाश पा लिया। ऊँचा उठने के लिए मन:स्थिति बदलना और सांसारिकता का पल्ला पकड़ने की अपेक्षा भगवान की शरण में जाना आवश्यक है। यही हमारा दूसरा कदम होना चाहिए।

तीसरा कदम आत्मिक उत्थान के लिए हमारा यह होना चाहिए कि हमारी महत्त्वाकांक्षाएँ, कामनाएँ,

इच्छाएँ बड़प्पन के केंद्र से हटें और महानता के साथ जुड़ जाएँ। हमारी महत्त्वाकांक्षाएँ यह नहीं होनी चाहिए कि हम जिंदगी भर वासना को पूरा करते रहेंगे और तृष्णा के लिए अपने समय और बुद्धि को खरच करते रहेंगे और अपने बड़प्पन को, अपनी अहंता को, ठाठ-बाट को लोगों के ऊपर रोब-गालिब करने के लिए हम तरह-तरह के ताने-बाने बुनते रहेंगे। अगर हमारा मन इस बात को मान जाए और अंत:करण स्वीकार कर ले कि यह बचकानी बातें हैं, छिछोरी बातें हैं, छोटी बातें हैं। अगर हम क्षुद्रता का त्याग कर सकें तो फिर हमारे सामने एक ही बात खड़ी होगी कि अब हमको महानता ग्रहण करनी है। महापुरुषों ने जिस तरीके से आचरण किए थे, उनके चिंतन करने का जो तरीका था, जिस तरीके से उनने आचरण किए थे, वही तरीका हमारा होना चाहिए और हमारी गतिविधियाँ उसी तरीके की होनी चाहिए जैसी कि श्रेष्ठ मनुष्यों की रही हैं और रहेंगी। यह विश्वास करने के बाद हमको अपनी

क्रियापद्धति में, दृष्टिकोण में, मान्यताओं में, इच्छा-आकांक्षाओं में परिवर्तन करने, बदल देने के बाद व्यावहारिक जीवन में भी थोड़े से कदम उठाने चाहिए।

साधकों के लिए यही मार्ग है कि मन और इंद्रियों की गुलामी को हम छोड़ दें। इंद्रियों की गुलामी को हम छोड़ दें और इनके स्वामी बनें। अब तक हम असहाय के रूप में, दीन-दुर्बल के रूप में इंद्रियों के कोड़े सहते रहे हैं और इनके दबाव और इनकी वजह से चाहे जहाँ घूमते हैं। मन हमको चाहे जहाँ घसीट ले जाता है। कभी गड्ढे में धकेल देता है, कभी कहीं कर देता है। इंद्रियाँ हमसे जाने क्या-क्या करा लेती हैं। मन न जाने क्या-क्या करने के लिए कहता रहता है। हम असहाय एवं गुलामों के तरीके से इन्हीं का कहना मानते हैं। अब हमको इन परिस्थितियों को बदल देना चाहिए। हमारी आपसे प्रार्थना है कि आप इनके स्वामी बनें। स्वामी अपनी ललक-लिप्सा को छोड़ दें। इंद्रियों को नौकरानी के

तरीके से इस्तेमाल करें बल्कि मन को नौकर के तरीके से इस्तेमाल करें। मन को हुकुम दें कि आपको हमारा कहना मानना ही पड़ेगा। इंद्रियों से कहें कि आप हमारी मरजी के बिना जो जी चाहे नहीं कर सकतीं। हमारी आज्ञा के बिना कैसे करेंगी? इस तरीके से इंद्रियों के ऊपर हुकूमत अगर हम कर पाएँ तो हम गुलामी के बंधन से मुक्त हो जाएँ। जिसके लिए हम मुक्ति चाहते हैं, भवबंधनों से मुक्ति चाहते हैं असल में यह कोई भवबंधनों से मुक्ति नहीं है। हमारे मन और इंद्रियों की गुलामी का नाम ही भव-बंधन है। इनसे यदि हम अपने को छुड़ा लेते हैं तो हम स्वभावत: जीवनमुक्त हो जाते हैं और मोक्ष मिल जाता है अगर इसके लिए हम साहस इकट्ठा कर पाएँ तब।

संसार में रहकर हम अपने कर्त्तव्य पूरे करें, हँसी-खुशी से रहें, अच्छे तरीके से रहें, लेकिन इसमें इस कदर व्यस्त न हो जाएँ-इस कदर न फँस जाएँ कि हमको अपने जीवन के उद्देश्यों का ध्यान

ही नहीं रहे। अगर हम इसमें फँसेंगे तो मरेंगे। मक्खी चाशनी के ऊपर दूर बैठकर रस लेती रहती है तब तो ठीक है। इस तरह वह जायका भी लेती रहती है और अपने को सुरक्षित भी रखती है, पर कोई ऐसी मूर्ख मक्खी जैसे कि आप हैं, चाशनी के ऊपर बेहिसाब टूट पड़ती है तो शहद खाना तो दूर, चाशनी खाना तो दूर वह अपने पंखों में भी लपेट लेती है और बेमौत मरती है। आपने उस बंदर का किस्सा सुना होगा जो अफ्रीका में पाए जाते हैं और जिनके बारे में यह कहा जाता है कि शिकारी लोग उसको मुट्ठी भर चने का लालच दे करके उसकी जान ले लेते हैं। उसे गिब्बन कहते हैं। उसे फँसाने के लिए लोहे के घड़े में चने भर दिए जाते हैं और गिब्बन उन चनों को खाने के लिए आता है, मुट्ठी बाँध लेता है, लेकिन जब मुट्ठी निकालना चाहता है तो वह निकलती नहीं है। जोर लगाता है तो भी नहीं निकलती। इतनी हिम्मत नहीं होती कि मुट्ठी को खाली कर दे और हाथ को खींच ले, लेकिन वह

मुट्ठी को छोड़ना नहीं चाहता। इसका परिणाम यह होता है कि हाथ बाहर निकलता नहीं और शिकारी आता है तथा उसको मारकर खत्म कर देता है। उसकी चमड़ी को उधेड़ लेता है। हमारी और आपकी स्थिति ऐसी ही है जैसे अफ्रीका के गिब्बन बंदरों की। हम लिप्साओं के लिए, लालसाओं के लिए, वासना के लिए, तृष्णा के लिए, अहंकार की पूर्ति के लिए मुट्ठी बंद करके बंदरों के तरीके से फँसे रहते हैं और अपनी जीवन संपदा का विनाश कर देते हैं। इससे हमको बाज आना चाहिए और अपने आप को इनसे बचाने की कोशिश करनी चाहिए।

हमको अपनी क्षुद्रता का त्याग करना ही है। जब हम क्षुद्रता का त्याग करते हैं तो कुछ खोते नहीं वरन कमाते ही कमाते हैं। कार्लमार्क्स मजदूरों से यही कहते थे—"मजदूरो एक हो जाओ, तुम्हें गरीबी के अलावा कुछ खोना नहीं है।" मैं कहता हूँ कि अध्यात्म मार्ग पर चलने वाले विद्यार्थियो! तुम्हें अपनी क्षुद्रता के अलावा और कुछ नहीं खोना है, पाना ही

पाना है। आध्यात्मिकता के मार्ग पर पाने के अलावा और कुछ नहीं है। इससे एक ही चीज हाथ से दी जाती है जिसका नाम है—क्षुद्रता और संकीर्णता। क्षुद्रता और संकीर्णता को त्यागने में अगर आपको बहुत कष्ट न होता हो तो मेरी प्रार्थना है कि आप इसको छोड़ दें और महानता के रास्ते पर चलें। जीवन में भगवान को अपना हिस्सेदार बना लें। भगवान के साथ अपने को जोड़ लें। अपने को जोड़ लेंगे तो यह रिश्तेदारी यह मुलाकात आपके बहुत काम आएगी। गंगा ने अपने आप को हिमालय के साथ में जोड़े रखा है। गंगा और हिमालय का तालमेल तथा रिश्ता-नाता ठीक बना रहा और गंगा हमेशा पानी खरच करती रही, लेकिन उसको पानी की कमी भी कभी नहीं पड़ने पाई। हिमालय के साथ-भगवान के साथ हम अपना रिश्ता जोड़ें तो हमारे लिए जीवन में कभी अभावों का, संकटों का अनुभव न करना पड़ेगा जैसे कि सामान्य लोग पग-पग पर किया करते हैं। गंगा का पानी सूखा नहीं, लेकिन

नाले का सूख गया, क्योंकि उसने महान सत्ता के साथ संबंध बनाया नहीं। बाढ़ का पानी आया तो सूखा नाला उछलने लगा, जैसे ही पानी सूखा, नाला भी सूख गया नौ महीने सूखा पड़ा रहा। बरसाती नाला तीन महीने बाद ही सूख गया, लेकिन गंगा युगों से बहती चली आ रही है, कभी सूखने का नाम नहीं लिया। हम भी अगर हिमालय के साथ जुड़ने, भगवान के साथ जुड़ने की हिम्मत कर पाएँ, तब हमें भी सूखने का कभी मौका नहीं आएगा।

अपने आप को हम अगर भगवान को समर्पित कर सकें तो ही भगवान को पाएँगे। कठपुतली ने अपने आप को बाजीगर के हाथों सौंप दिया और बाजीगर की सारी कला का लाभ उठाया। हम भगवान की सारी कला का लाभ उठा सकते हैं, शर्त केवल यही है कि हम अपने आप को अपनी महत्त्वाकांक्षाओं को और अपनी दुष्प्रवृत्तियों को भगवान के सुपुर्द कर दें। पतंग ने कुछ खोया नहीं, बच्चे के हाथ में अपने को सौंप दिया और बच्चे ने

उस पतंग को डोरी के सहारे उड़ाया और पतंग आसमान छूने लगी। अगर पतंग ने इतनी हिम्मत और बहादुरी न दिखाई होती और बच्चे के हाथ में अपना मार्गदर्शन न सौंपा होता तो क्या पतंग उड़ सकती थी? नहीं, जमीन पर ही पड़ी रहती। बांसुरी ने अपने आप को किसी गायक को सौंपा। गायक के होठों से लगी और गायक होठों ने वह हवा फूँक मारी जिससे कि चारों ओर मधुर संगीत निनादित होने लगा। हम भगवान के साथ में अपने आप को इसी तरीके से जोड़ें जैसे कि कठपुतली, पतंग और बांसुरी अपने आप को जोड़ती हैं, न कि इस तरीके से कि पग-पग पर हुकूमत चलाएँ भगवान के साथ और अपनी मनोकामना पेश करें। यह भक्ति की निशानी नहीं है। भगवान की आज्ञा पर चलना हमारा काम है। भगवान पर हुकूमत करना और भगवान के सामने तरह-तरह की फरमाइशें पेश करना यह तो वेश्यावृत्ति का काम है। हममें से किसी को भी उपासना लौकिक कामनाओं के लिए नहीं, बल्कि

भगवान की साझेदारी के लिए, भगवान को स्मरण रखने के लिए, भगवान के आज्ञानुवर्ती होने के लिए और भगवान को अपना समर्पण करने के उद्देश्य से होनी चाहिए। अगर आप ऐसी उपासना करेंगे, तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आपकी उपासना सफल होगी। आपको आंतरिक संतोष मिलेगा। न केवल आंतरिक संतोष मिलेगा, बल्कि आपके व्यक्तित्व का विकास होगा। व्यक्तित्व के विकास का निश्चित परिणाम यह होता है कि आदमी भौतिक और आत्मिक दोनों तरह की सफलताएँ भरपूर मात्रा में प्राप्त करता है।

मेरा आपसे यह अनुरोध है कि आप हँसती-हँसाती जिंदगी जिएँ, खिलती-खिलाती जिंदगी जिएँ। हलकी-फुलकी जिंदगी जिएँ। अगर हलकी-फुलकी जिंदगी जिएँगे तो आप जीवन का सारे का सारा आनंद पाएँगे और अगर आप वासना, तृष्णा, लोभ लिप्सा में घुसेंगे तो नुकसान उठाएँगे। आप अपने कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिए जिंदगी जिएँ और

हँसी-खुशी से जिएँ। किसी बात को बहुत महत्त्व न दें। अपने किसी कर्त्तव्य की उपेक्षा भी न करें, लेकिन उसमें इतने ज्यादा मशगूल भी न हों कि किसी लौकिक काम को ज्यादा महत्त्व देने लगें और अपने मन की शांति खो बैठें।

हमें माली की जिंदगी जीनी चाहिए मालिक की नहीं। मालिक की जिंदगी में बहुत भारीपन है और बहुत कष्ट हैं। माली की जिंदगी के तरीके से रखवाली करने वाले के, चौकीदार के तरीके से हम जिएँ तो पाएँगे कि जो कुछ भी कर लिया, वह हमारा कर्त्तव्य ही काफी था। मालिक को चिंता रहती है कि सफलता मिली कि नहीं। उसको इतनी चिंता रहती है कि अपने कर्त्तव्य और फर्ज पूरे किए कि नहीं। हम दुनिया में रहें, काम दुनिया में करें, पर अपना मन भगवान में रखें अर्थात उच्च उद्देश्यों और उच्च आदर्शों के साथ जोड़कर रखें। कमल का पत्ता पानी पर तैरता है, लेकिन डूबता नहीं है। हम दुनिया में डूबें नहीं। हम खिलाड़ी के तरीके से

जिएँ। हार-जीत के बारे में बहुत ज्यादा चिंता न करें। हम अभिनेता के तरीके से जिएँ और यह देखें कि हमने अपना पार्ट-प्ले ठीक तरीके से किया कि नहीं किया। हमारे लिए इतना ही संतोष बहुत है। ठीक है परिणाम नहीं मिला तो हम क्या कर सकते हैं। बहुत सी बातें परिस्थितियों पर निर्भर रहती हैं। परिस्थितियाँ हमारे अनुकूल नहीं रहीं तो हम क्या कर सकते हैं। हमने अपना कर्त्तव्य पूरा किया, हमारे लिए इतना बहुत है। इस दृष्टि से अगर आप जिएँगे तो आपकी खुशी को कोई छीन नहीं सकता और आपको इस बात की परवाह नहीं होगी कि जब कभी सफलता मिले तब आप प्रसन्न हों। चौबीसों घंटे आप खुशी से जीवन जी सकते हैं। जीवन की सार्थकता, सफलता का यही तरीका है।

आप मुनीम के तरीके से जिएँ, मालिक के तरीके से नहीं। आप बंदीगृह के कैदी से अपने आपकी तुलना करें जिसका घर कहीं और है। जो जेल में रहता तो है पर याद अपने घर वालों की बनाए रखता

है। सैनिक सेना में काम तो करता है, पर अपने घर वालों का भी ध्यान रखता है। हम अपने घर वालों का भी ध्यान रखें अर्थात भगवान का भी ध्यान रखें। जिस लोक के हम निवासी हैं, जिस लोक में हमको जाना है, उसका भी ध्यान रखें। इस लोक में हम आए हुए हैं—ठीक है यहाँ के भी कई कर्त्तव्य और जिम्मेदारियाँ हैं। चिंता में डूब नहीं जाएँ, तो हमारे लिए जीवन की सार्थकता बन सकती है।

साधकों में से कई व्यक्ति हमसे यह पूछते रहते हैं कि हम क्या करें? मैं उनमें से हर एक से कहता हूँ कि यह मत पूछिए, बल्कि यह पूछिए कि क्या बनें? अगर आप कुछ बन जाते हैं तो करने से भी ज्यादा कीमती है वह। फिर जो कुछ भी आप कर रहे होंगे वह सब सही हो रहा होगा। आप साँचा बनने की कोशिश करें। अगर आप साँचा बनेंगे तो जो भी गीली मिट्टी आपके संपर्क में आएगी। आपके ही तरीके से आपके ही ढंग के-शकल के खिलौने बनते हुए चले जाएँगे। आप सूरज बने तो

आप चमकेंगे और चलेंगे। उसका परिणाम क्या होगा? जिन लोगों के लिए आप करना चाहते हैं वे आपके साथ-साथ चमकेंगे और चलेंगे। सूरज के साथ में नौ ग्रह और बत्तीस उपग्रह हैं। वे सब के सब चमकते हैं और साथ-साथ चलते हैं। हम चलें, हम प्रकाशवान हों, फिर देखेंगे कि जिस जनता के लिए आप चाहते थे कि वह हमारी अनुगामी बने और हमारी नकल करे तो वह ऐसा ही करेगी। आप देखेंगे कि आप चलते हैं तो दूसरे लोग भी चलते हैं। आप स्वयं नहीं चलेंगे, और यह अपेक्षा करेंगे कि दूसरे आदमी हमारा कहना मानें तो यह मुश्किल बात है। आप गलें और वृक्ष को और वृक्ष बन करके अपने जैसे असंख्यों बीज, आप बनिए, गलिए, वृक्ष बनिए और अपने भीतर से ही फल पैदा करिए और प्रत्येक फल में से ढेरों के ढेरों बीज पैदा कीजिए। आप अपने भीतर से ही बीज क्यों नहीं बनाएँ?

मित्रो, जिन लोगों ने अपने आपको बनाया है उनको यह पूछने की जरूरत नहीं पड़ी कि क्या

करेंगे। इनकी प्रत्येक क्रिया ही सब कुछ करा सकने में समर्थ हो गई। उनका व्यक्तित्व इतना आकर्षक रहा कि प्रत्येक सफलता का और प्रत्येक महानता को संपन्न करने के लिए काफी था। सिक्खों के गुरु रामदास के शिष्य अर्जुन जी बर्तन-थाली साफ करने का काम करते थे। उन्होंने अपने आपको अनुशासन में ढालने का प्रयत्न किया पर जब उनके गुरु यह तलाश करने लगे कि कौन से शिष्य को अपना अधिकारी बनाया जाए। सारे विद्वानों की अपेक्षा, नेता और दूसरे गुण वालों की अपेक्षा उन्होंने अर्जुन देव को चुना यह कहा कि अर्जुन देव ने अपने को बनाया है। बाकी आदमी इस कोशिश में लगे रहे कि हम दूसरों से न कराएँ और स्वयं क्या करें। जबकि होना यह चाहिए था कि जिस तरीके से अर्जुन देव ने न कुछ किया था और न कराया था, केवल अपने आप को बना लिया था। इसलिए उन्हें गुरु ने माना कि यह सबसे अच्छा आदमी है। सप्त-ऋषियों ने अपने आप को बनाया था। उनके अंदर तप

की संपदा थी, फिर वो कोई भी कहीं भी रहते चले गए और जो भी काम उन्होंने किए वही महानता की श्रेणी का उच्चस्तरीय काम कहलाया। अगर उनका व्यक्तित्व घटिया होता तो फिर बात कैसे बनती ?

गांधी जी ने अपने आप को बनाया था तभी हजारों आदमी उनके पीछे चले। बुद्ध ने अपने आप को बनाया, हजारों आदमी उनके पीछे चले। हम भी अपने में चुंबकत्व पैदा करें। खदानों के अंदर लोहे और अन्य धातुओं के कण जमा हो जाते हैं, उसका कारण यही है कि जहाँ कहीं भी खदान होती है, वहाँ चुंबकत्व रहता है। चुंबकत्व छोटी-छोटी चीजों को अपनी ओर खींचता रहता है। हम भी अपनी 'क्वालिटी' बढ़ाएँ, अपना चुंबकत्व बढ़ाएँ, अपना व्यक्तित्व बढ़ाएँ, यही सबसे बड़ा करने के लिए काम है। समाज की सेवा भी करनी चाहिए, पर मैं यह कहता हूँ कि समाजसेवा से भी पहले ज्यादा महत्त्वपूर्ण इस बात को आप समझें कि हमको अपनी क्वालिटी बढ़ानी है। कोयले और हीरे में रासायनिक दृष्टि से

कोई फर्क नहीं ? कोयले का ही परिष्कृत रूप हीरा है। खनिज में से जो धातुएँ निकलती हैं, कच्ची होती हैं, लेकिन जब पकाकर के ठीक कर ली जाती हैं और साफ-सुथरी बना दी जाती हैं तो उन्हीं धातुओं का नाम स्वर्ण-शुद्ध स्वर्ण हो जाता है। उसी का नाम फौलाद हो जाता है। हम अपने आप को फौलाद बनाएँ। अपने आप की सफाई करें। अपने आप को धोएँ। अपने आप को परिष्कृत करें। इतना कर सकना यदि हमारे लिए संभव हो जाए तो समझना चाहिए कि आपका यह सवाल पूरा हो गया कि हम क्या करें ? क्या न करें ? आप अच्छे बनें। समाज सेवा करने से पहले यह आवश्यक है कि हम उसकी सेवा के लायक हथियार तो अपने आप को बना लें। यह ज्यादा अच्छा है कि हम अपने आप की सफाई करें।

मित्रो, एक और बात कह करके हम अपनी बात समाप्त करना चाहते हैं। एक हमारा आमंत्रण अगर आप स्वीकार कर सकें तो बड़ी मजेदार बात होगी। आप हमारी दुकान में शामिल हो जाइए, इससे

बहुत फायदा है। इसमें से हर आदमी को काफी मुनाफे का हिस्सा मिल सकता है। माँगने से तो हम थोड़ा सा ही दे पाएँगे। भीख माँगने वालों को कहाँ, किसने, कितना दिया है ? लोग थोड़ा सा ही दे पाते हैं। आप हमारी दुकान में साझेदार-हिस्सेदार क्यों नहीं बन जाते। अंधे और पंगे का योग क्यों नहीं बना लेते। हमारे गुरु और हमने साझेदारी की है। शंकराचार्य और मांधाता ने साझेदारी की थी इस दुकान में। सम्राट अशोक और बुद्ध ने साझेदारी की थी। समर्थ गुरु रामदास और शिवाजी ने साझेदारी की थी। रामकृष्ण और विवेकानंद ने साझेदारी की थी। क्या आप ऐसा नहीं कर सकते कि हमारे साथ शामिल हो जाएँ। हम और आप मिलकर के एक बड़ा काम करें। उसमें से जो मुनाफा आए उसको बाँट लें। अगर आप इतनी हिम्मत कर सकते हों कि हम प्रामाणिक आदमी हैं और जिस तरीके से हमने अपने गुरु की दुकान में साझा कर लिया है, आप आएँ और हमारे साथ साझा करने की कोशिश करें। अपनी पूँजी उसमें लगाएँ।

समय की पूँजी, बुद्धि की पूँजी हमारी दुकान में शामिल करें और इतना मुनाफा कमाएँ जिससे कि आप निहाल हो जाएँ। हमारी जिंदगी के मुनाफे का यही तरीका है। हमने अपनी पूँजी को अपने गुरुदेव के साथ में मिला दिया है, उसी कंपनी में शामिल हो गए हैं। हमारे गुरुदेव, हमारे भगवान की कंपनी में शामिल हैं। हम अपने गुरुदेव की कंपनी में शामिल हैं। आपमें से हर एक का आह्वान करते हैं कि अगर आपकी हिम्मत हो तो आप आएँ और हमारे साथ जुड़ जाएँ। हम जो भी लाभ कमाएँगे भौतिक और आध्यात्मिक, उसका इतना हिस्सा आपके हिस्से में मिलेगा कि आप धन्य हो सकते हैं और निहाल हो सकते हैं, उसी तरीके से कि जैसे हम धन्य हो गए और निहाल हो गए। यही हमारा साधकों से आग्रह भरा अनुरोध इस बदलती विषम वेला में है।

ॐ शांतिः

महानता से जुड़ें-समय को पहचानें

युग परिवर्तन के इस समय में एक तथ्य विशेषतया हृदयंगम करने योग्य है कि अवसर को पहचानने और उसका सदुपयोग करने वाले ही सदा से श्रेयाधिकारी बनते रहे हैं। जब-जब भी समय बदला है, एक अकेले से नहीं अग्रगामियों के समूह के माध्यम से वह पुरुषार्थ संपन्न हुआ है। अवतारों की परंपरा भी इनकी साक्षी है।

विगत अवतारों में उनके सामयिक सहयोगियों का अविस्मरणीय अनुदान रहा है। राम अवतरण में लक्ष्मण, हनुमान, अंगद, विभीषण, सुग्रीव, नल-नील जैसे बलिष्ठ और सामान्य रीछ-वानरों जैसे कनिष्ठ समान रूप से सहगामी रहे हैं। गिद्ध, गिलहरी जैसे अकिंचनों ने भी सामर्थ्यानुसार भूमिकाएँ निभाई हैं। कृष्ण काल में पांडवों से लेकर ग्वाल-वालों तक का सहयोग साथ रहा है। बुद्ध के भिक्षु और गांधी के सत्याग्रही कंधे से कंधा मिलाकर जुटे और कदम से कदम मिलाकर चलते रहे हैं। भगवान सर्व-समर्थ हैं

वे चाहें अँगुली पर उठा सकते हैं और वाराह, नृसिंह की तरह अकेले ही अभीष्ट प्रयोजन पूरे कर सकते हैं, किंतु प्रियजनों को श्रेय देना भी अवतार का एक बड़ा काम है। शबरी और कुब्जा जैसी महिलाओं और केवल सुदामा जैसे पुरुषों को भी अवतार के सखा सहचर होने का लाभ मिला था। गांधी के सान्निध्य में विनोबा और बुद्ध के सहचर आनंद जैसे असंख्यों को श्रेय मिला था। भगवान के अनन्य भक्तों में से नारद जैसे देवर्षि, वसिष्ठ जैसे महर्षि और विभीषण जैसे अगणितों को अविच्छिन्न यश पाने का अवसर मिला है। सहकारिता को संगठन की सर्वोपरि शक्ति के रूप में प्रतिपादन करने के लिए महान शक्तियाँ सदा ही यह प्रयत्न करती रही हैं कि जाग्रतों को महत्त्वपूर्ण अवसरों पर अग्रिम पंक्ति में खड़े होने के लिए उभारा जाए। अर्जुन के साथ तो इसके लिए भर्त्सना उपाय बरते गए थे। सुग्रीव को धमकाने लक्ष्मण पहुँचे थे। परमहंस विवेकानंद को घसीटकर आगे लाए थे। अम्बपाली, अंगुलिमाल, हर्षवर्द्धन और अशोक से जो लिया गया

था, उससे असंख्य गुना उन्हें लौटाया गया था। भामाशाह के सौभाग्य पर कितने ही धनाध्यक्ष ईर्ष्या करते रहते हैं।

भगतसिंह और सुभाष जैसा यश मिलने की संभावना हो तो उस मार्ग पर चलने के लिए हजारों आतुर देखे जाते हैं। समझाया जाए तो कितने ही केवल बिना उतराई लिए पार उतारने की प्रक्रिया पूरी कर सकते हैं। पटेल और नेहरू बनने के लिए कोई भी अपनी वकालत छोड़ सकता है पर दुर्भाग्य इतना ही रहता है कि समय को पहचानना और उपयुक्त अवसर पर साहस जुटाना उन लोगों से बन ही नहीं पड़ता। जागरूक ही हैं जो महत्त्वपूर्ण निर्णय करते, साहसिकता अपनाते और अविस्मरणीय महामानवों की पदवी प्राप्त करते हैं। ऐसे सौभाग्यों में श्रेयार्थी का विवेक प्रमुख होता है अथवा उपनिषदकार के अनुसार, "महानता जिसे चाहती है उसे वरण कर लेती है" की उक्ति में सन्निहित दैवी अनुकंपा के प्रतिपादनों में से कौन-सा सही है?

चंदन के समीप उसे झाड़-झंखाड़ों के सुगंधित बन जाने और उसी मूल्य में बिकने की किंवदंती प्रख्यात है। पानी को दूध में मिलकर उसी भाव बिकने की उक्ति आएदिन दोहराई जाती रहती है। पारस को छूकर काले, कुरूप और सस्ते मोल वाले लोहे का सोने जैसा गौरवास्पद बहुमूल्य धातु में बदल जाना प्रख्यात है। स्वाति की बूँदों के लाभान्वित होने पर सीप जैसी उपेक्षित इकाई को मूल्यवान मोती प्रसव करने का श्रेय मिलता है। पेड़ से लिपटकर चलने वाली बेल उसी के बराबर ऊँची जा पहुँचती और अपनी प्रगति पर गर्व करती है। जबकि वह अपने बलबूते मात्र जमीन पर ही थोड़ी दूर रेंग सकती है, इसकी दुर्बल काया को देखते हुए इतने ऊँचे बढ़ जाने की बात किसी प्रकार समझ में नहीं आती, किंतु पेड़ का सान्निध्य और लिपट पड़ने का पुरुषार्थ जब सोना सुहागा बनकर समन्वय बनाते हैं तो उससे महान पक्ष की तो हानि नहीं होती पर दुर्बल पक्ष को अनायास ही दैवी-वरदान जैसा लाभ मिल जाता है।

यह उदाहरण उस सुयोग का महत्त्व समझाने के लिए दिए जा रहे हैं जिसमें महानता के साथ संपर्क साधना उसके सहयोग का सुयोग पा लेना भी कई बार अप्रत्याशित सौभाग्य बनकर सामने आता है। यों वैसे अवसर सदा-सर्वदा हर किसी के लिए उपलब्ध नहीं रहते।

हनुमान का उदाहरण इसी प्रकार का है। वे सदा से सुग्रीव के सहयोगी थे पर जब बालि ने उसकी संपदा एवं गृहिणी का अपहरण किया तो वे प्रतिरोध में कोई पुरुषार्थ न दिखा सके। इससे प्रतीत होता है कि उस अवसर पर सुग्रीव की तरह हनुमान ने भी अपने को असमर्थ पाया होगा और जान बचाकर कहीं खोह-कंदरा में आश्रय लेने में ही भला देखा होगा। पर वे जब प्राण हथेली पर रख काम-काज के परमार्थ प्रयोजन में संलग्न हुए तो पर्वत उठाने, समुद्र लांघने, अशोक उद्यान उजाड़ने, लंका जलाने जैसे असंभव पराक्रम दिखाने लगे। सुग्रीव पत्नी को रोकने में सर्वथा असमर्थ रहने पर भी अन्य देश में, समुद्र

पर बसे अभेद्य दुर्ग को बेधकर वे सीता को मुक्त कराने में सफल हो गए। इसमें दैवी सहायता की बात प्रत्यक्ष है। ऐसा अनुग्रह उन सभी को मिल सका जिन्होंने राम की गरिमा को, उनकी लीलाक्रम को सहयोग देने की परिणति की पूर्व कल्पना कर ली। वयोवृद्ध जामवंत और जटायु, अकिंचन गिलहरी, दरिद्र केवट और शबरी की सामर्थ्य और भूमिकाओं को देखा जाए तो उनके द्वारा प्रस्तुत किए गए अनुदान अकिंचन जितने ही कहे जा सकते हैं। इतने पर भी उनकी गाथाएँ अजर-अमर बन गईं।

अर्जुन, भीम जैसों को श्रीकृष्ण से जुड़कर जो श्रेय मिला उनकी गरिमा असामान्य हो गई। अर्जुन, भीम वे ही थे, जिन्हें वनवास के समय पेट भरने के लिए बहुरूपिये बनकर दिन गुजारने पड़े थे। द्रौपदी को निर्वसन होते आँखों से देखने वाले पांडव यदि वस्तुतः महाभारत जीत सकने जैसी समर्थता के धनी रहे होते तो न तो दुर्योधन, दुःशासन वैसी धृष्टता करते और न पांडव ही उसे सहन कर पाते। कहना न होगा

कि पांडवों की विजयश्री में उनकी वह बुद्धिमत्ता ही मूर्द्धन्य मानी जाएगी जिसमें उन्होंने श्रीकृष्ण को अपना और अपने को कृष्ण का बनाकर भगवान से घोड़े हँकवाने जैसे छोटे काम कराने को विवश कर दिया था। यदि वे वैसा न कर पाते और अपने बलबूते जीवन गुजारते तो स्थिति सर्वथा भिन्न होती और यायावरों की तरह जैसे-तैसे जिंदगी व्यतीत करते।

बुद्ध के साथ जुड़ने का साहस न कर पाते तो हर्षवर्द्धन, अशोक, आनंद, राहुल, कुमारजीव, संघमित्रा, अम्बपाली आदि की जीवनचर्या कितनी नगण्य रह गई होती इसका अनुमान लगा सकना किसी के लिए भी कठिन नहीं होना चाहिए। गांधी के साथ यदि विनोबा, राजगोपालाचार्य, नेहरू, पटेल, राजेंद्र बाबू आदि न घुले होते और अपना-अपना वर्चस्व बनाकर चले होते तो वह स्थिति नहीं बन पाती जो बन सकी।

चाणक्य के साथ चंद्रगुप्त, समर्थ के साथ शिवाजी, परमहंस के साथ विवेकानंद की सघनता दोनों ही पक्षों के लिए कितनी संतोषजनक परिणाम

प्रस्तुत कर सकी इसे कौन नहीं जानता। मांधाता ने आद्य शंकराचार्य के साथ जुड़कर चारों धाम बनाने का श्रेय पाया। भामाशाह का अनुदान राणाप्रताप के साथ संबंध होने पर ही सार्थक हुआ अन्यथा इतना पैसा तो सेठ साहूकारों के यहाँ से चोर-ठग भी उठा ले जाते हैं और बेटे, पोतों में दुर्व्यसनों में उड़ाते-फूँकते देखे जाते हैं। महामानवों के साथ जुड़ जाने पर श्रेय-पथ कितनी द्रुतगति से प्रशस्त होता है, इनके असंख्य उदाहरणों में टिटिहरी का वह कण भी सम्मिलित है जिसमें अगस्त्य ऋषि की सहायता से समुद्र सोखे जाने और अंडे वापस मिलने की घटना कही जाती है।

सत्साहस अपनाने की गरिमा तो सदा ही रही है और रहेगी, पर इस दिशा में बढ़ने, सोचने वालों में से अत्यधिक भाग्यवान वे हैं जो किसी महान अवसर के सामने आते ही उसे हाथ से न जाने देने की तत्परता बरत सकें। महान व्यक्ति भी सदा नहीं जन्मते। जन्मते हैं तो उनके साथ जुड़कर स्वल्प पराक्रम से असीम यश पाने का सुअवसर हर किसी को कहाँ मिलता है ?

इसे दैवी वरदान या पूर्व संचित पुण्यों का प्रतिफल ही कहना चाहिए कि महानता उभरे और उनके साथ सघनता स्थापित करने का साहस जग पड़े।

इन दिनों महाकाल ने आग्रहपूर्वक प्राणवानों को सहयोग देने के लिए बुलाया है। वस्तुतः यह श्रेयाधिकारी बनने का सौभाग्य संदेश भर है। भगवान के काम, समय के उपक्रम एवं दिव्यशक्तियाँ अपनी अदृश्य क्षमता के आधार पर स्वयं ही संपन्न कर लेती हैं। रीछ वानर रूठ-मटककर बैठ जाते तो सीता वापसी और लंका की दुर्गति निश्चित थी। ऐसे अवसरों का सबसे बड़ा लाभ वे अग्रगामी उठाते हैं जो संकीर्ण स्वार्थपरता को छोड़कर समय की माँग पूरी करने के लिए बिना समय गँवाये अग्रिम मोर्चे पर जा खड़े होते हैं। प्रस्तुत प्रभात वेला को ठीक ऐसा ही मुहूर्त समझा जाना चाहिए, जिसमें साहसी, सदाशयी छोटे-छोटे कदम बढ़ने पर भी अत्यधिक श्रेय संचित कर सकने वाले दूरदर्शियों में गिने जाएँगे।

❐

मुद्रक—युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ. प्र.)